

अब व्योम विमल है

कविता चौधरी¹

तपती थी दोपहरी दारुण, झुलसा-झुलसा था वन-उपवन,
पत्ते-पत्ते मौन खड़े थे, बूँद-बूँद को तृषित हुआ मन।
अंग-अंग से स्वेद टपकता, घुटती थी नभ में भारी उमस,
तप्त श्वास थी, रुकी वायु थी, शिथिल-विकल था सकल चराचर।
सहसा घिरे गगन पर अंबर, घन घहराए नीलम-कजरारे,
फूट पड़ी सावन की धारा, रोए बादल अश्रु बहाए।
जी भर बरसे मेघ गगन में, धुल-धुल निकली तृषित धरा,
शांत हुई वह अगन पुरातन,
अब आकाश विमल है,
अब आकाश विमल है!
संध्या की पदचाप हुई जब, भीगी माटी महक उठी,
ढलते दिन की रक्तिम आभा, नभ-मस्तक पर चमक उठी।
दिन भर का दहकता जो लावा, शीतल झोंकों ने शांत किया,
ज्वाला-सुलगे व्योम-पटल को मेघों ने वरदान दिया।
धुल गया सारा ताप गगन का,
छूट गया वह भार सघन-सा,
शांत समीरन बही सुखद अब—
प्रक्षालित आलोक धरा पर,
अब आकाश विमल है!

¹ स्वतंत्र लेखिका, झालरा, राजस्थान, भारत